दिनांक :- 24-05-2020

कॉलेज का नाम :- मारवाड़ी कॉलेज दरभंगा

लेखक का नाम :- डॉ० फ़ारूक आज़म (अतिथि शिक्षक)

स्नातक :- 12th (अनुशांगिक) कला

विषय :- प्रतिष्ठा इतिहास

सेमेस्टर :- पाँच

पत्र :- प्रथम

अध्याय :- लौहयुगीन संस्कृतियाँ

भारत में लौहे की प्राचीनता के विषय में विवाद है। पहले ऐसा माना जाता था कि मध्य एशिया की हित्ती जाति (ई० पू० 1800-1200) का इस पर एकाधिकार था और सर्वप्रथम उसी ने इसका प्रयोग किया किंतु अब इस सम्बंध में नवीन साक्ष्यों के मिल जाने के बाद यह मत मान्य नहीं है। नोह (राजस्थान) तथा इसके दोआबक्षेत्र से लोहा काले और लाल मृद्भाण्डों के साथ मिलता

है जिसकी सम्भावित तिथि ई० पू० 1500 है। कुछ स्थलों जैसे भगवानपुर, माण्डा, दधेरी, आलमगीपुर, रोपड़ आदि में चित्रित धूसर भाण्ड सैन्धव सभ्यता के पतन के साथ लगभग ई० पू० 1700 मिलते हैं जिनका सम्बंध लौह से माना गया है। ऋग्वेद में कवच (वर्म) का उल्लेख है जो अवश्य ही लौहे के रहे होंगे। अधिकांश विद्वान यह मानने लगे हैं कि ऋग्वेद आर्यों का भी इसका ज्ञान था। हड़प्पा सभ्यता से प्राप्त उत्तम कोटि के तांबे और कांसे की उपकरण तथा गंगाघाटी से प्राप्त ताम्र निधियों एवं गेरिक भाण्डों से स्पष्ट होता है कि तत्कालीक भारतीयों का तकनीकी ज्ञान अत्यंत विकसित था। सम्भव है गंगाघाटी के ताम्र धातुकर्मी ही लौहे के अविष्कर्ता रहे होंगे क्योंकि कच्चे लौहे की दो बड़ी निधियाँ माण्डी (हिमाचल) तथा नरनौल (पंजाब) उत्तर भारत से ही मिलती है। भारत के विभिन्न स्थलों की खुदाई से

लौह प्रयोक्ता संस्कृतियों के साक्ष्य मिलते है। ये अत्यंत समृद्ध एवं विकसित ग्राम्य संस्कृतियाँ है जिनकी पृष्ठभूमि पर ऐतिहासिक काल में द्वितीय नगरीकरण सम्भव हुआ। इन संस्कृतियों के लोग जिस विशिष्ट प्रकार के मृद्भाण्ड का प्रयोग करते थे वे प्रधानतः धूसर या स्लेटी (Grey) रंग के है और इनके ऊपर काले रंग के चित्रकारियाँ की गयी है। इन्हे चित्रित धूसर मृद्भाण्ड (Painted Grey ware) कहा जाता है। प्रारंभिक पात्रों के साथ लौह उपकरण नहीं मिलते किंतु बाद में ये सभी स्थलों से मिलते है। इस कारण चित्रित धूसर भाण्ड संस्कृति लौहकालीन संस्कृति कही जाती है। यद्यपि लौहयुगीन संस्कृति के अधिकांश स्थल मध्य देश अथवा ऊपरी गंगाघाटी क्षेत्र में स्थित है जो सतलज से गंगा नदी तक विस्तृत था, किंतु इसका विस्तार अन्य क्षेत्र में भी मिलता है। प्रमुख स्थल जिनकी खुदाई की गयी

है- अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, अंतरजीखेड़ा, आलमगीरपुर

अल्लाहपुर (मेरठ) मथुरा, रोपड़, श्रावस्ती, नोह,

काम्पिल्य आदि (उत्तरी भारत), नागदा तथा एरण

(मध्य भारत) है। पूर्वी भारत से जिन स्थलो से ताम्र

पाषाणिक संस्कृतियों के साक्ष्य मिले है (जैसे पाण्डु

राजार, ढिवि, महिशाल सोनपुर चिरांड आदि) उसके

बाद के स्तर से लौह उपकरण भी मिल जाते है।

दक्षिण मे वृहत्पाषाणिक समाधियो के स्थल से लौहे

के अस्त्र-शस्त्रो और उपकरणो का प्रयोग बहुतायत

मे किये जाने 1000-600 तक भारत के प्रायः सभी

भागो के लौहे के अस्त्र शस्त्र बनाए गए। हस्तिनापुर

तथा अंतरजीखेड़ा की खुदाइयो मे लौह धातुमल तथा

तथा भट्ठियाँ मिलती है जिनसे पता चलता है कि यहाँ

के निवासी लौहे को लगातार गलाकर विविध आकार

प्रकार के उपकरण बनाने में भी निपुण थे। पहले लोहे से युद्ध संबंधी अस्त्र शस्त्र बनाये गये किन्तु बाद में कृषि संबंधी उपकरणों हंसिया, खुरपी, फाल आदि का भी निर्माण किया जाने लगा। कृषि कार्य में लौह उपकरणों के प्रयोग से अधिकाधिक भूमि को खेती योग्य बनाया गया तथा उत्पादन भी प्रचुर होने लगा।

भारत में लोहे की प्राचीनता :⟶

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, सिंधु घाटी की सभ्यता कांस्यकालीन है। इसके बाद भारत में लौह युग का प्रारंभ होता है। भारत में लोहे की प्राचीनता सिद्ध करने के लिए हमें साहित्यिक तथा पुरातात्विक दोनों ही प्रमाणों से सहायता मिलती है।

कुछ विद्वानों का मत है कि विश्व में सर्वप्रथम हित्ती नामक जाति जो एशिया माइनर (टर्की) में ई० पू० 1800-1200

के लगभग शासन करती थी। न ही लौह का प्रयोग किया था। उनका एक शक्तिशाली साम्राज्य था। ई० पू० 1200 के लगभग इस साम्राज्य का विघटन हुआ और इसके बाद ही विश्व के अन्य देशों में इस धातु का प्रचलन हुआ। अतः ई० पूर्व 1200 के पहले भारत में भी लौह के अस्तित्व की कल्पना नहीं कर सकते हैं। किंतु लौह पर हित्ती एकाधिकार की बात अब तर्क संगत नहीं प्रतित होती है उल्लेखनीय है कि आईलैंड में बनौची नामक पुरा स्थल की खुदाई से स्तरीकृत सँदर्भों में ढला हुआ लोहा मिलता है जिसकी तिथि ईसा पूर्व 1600-1200 के मध्य निर्धारित की गयी है। इस प्रमाण से लौह पर हित्ती एकाधिकार की बात मिथ्या सिद्ध हो जाती है पुनश्चय नोह (भरतपुर, राजस्थान) तथा इसके

दोआब वाले क्षेत्र से लोहा कृष्ण लोहित मृद्भाण्ड के साथ मिलता है जिसकी संभावित तिथि ई० पू० 1500 के लगभग है। परियार के दसवें स्तर से भी कृष्णलोहित मृद्भाण्ड के साथ लोहे की एक भाले की नोक मिलती है उज्जैन विदिशा आदि की यही स्थिति है। भगवानपुर हरियाणा में यह चित्रित धूसर मृद्भाण्ड के साथ मिलता है जो उत्तर-हड़प्पाकालीन स्तर है। आलमगीर पुर तथा रोपड़ में भी यही स्थिति है। अथर्ववेद में नील लोहित शब्द मिलता है। ए० घोष ने स्पष्टतः बताया है कि इससे तात्पर्य कृष्ण लोहित मृद्भाण्ड से है। अतः भारत में लोहे का प्रादुर्भाव कृष्णलोहित मृद्भाण्ड के साथ हुआ न कि चित्रित धूसर मृद्भाण्ड का भगवानपुर के साक्ष्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लोहा ऋग्वैदिक काल में भी ज्ञात था। सुप्रसिद्ध है।